17 अगस्त 2007, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

प्रत्येक आत्मार्थी को चाहिये कि वह जगत के प्रपंचों से दूर रहकर तत्त्वाभ्यास में प्रयत्नशील रहें।

ह्न सूक्ति सुधा, पृष्ठ-42

वर्ष : 30, अंक : 10 सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : 251 रुपये

अगस्त (द्वितीय), 2007 प्रबन्ध सम्पादक : **पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी** वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

30 वाँ आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर सानन्द सम्पन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट, मुम्बई द्वारा प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 5 अगस्त से 14 अगस्त, 2007 तक 30 वें आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया।

शिविर का उद्घाटन दिनांक 5 अगस्त, 2007 को डॉ. बाबूभाई दोशी कडियादरा के करकमलों से हुआ। इस अवसर पर आयोजित सभा की अध्यक्षता श्री शैतानमलजी कीयावत, मन्दसौर ने की।

सभा को संबोधित करते हुये विद्वत् शिरोमणी डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर ने कहा कि हम दिगम्बर जैन समाज के ही अभिन्न अंग हैं, हमारी कोई भी चेष्टा ऐसी न हो जो संघठन के नाम पर विघटन का कारण बने। हमारे इस महाविद्यालय में बिना किसी भेदभाव के सम्पूर्ण जैन समाज के बालकों को प्रवेश दिया जाता है, जिनमें मुमुक्षुओं के बालक 25 प्रतिशत ही होंगे। यही अनुपात शिविरों में आनेवाले भाईयों का भी है तथा दशलक्षण में विद्वानों को प्रवचनार्थ बुलानेवालों का भी है। सम्पूर्ण जैनसमाज की एकता की दृष्टि से यह सुखद स्थिति है। इसे कायम रखा जाना चाहिये।

उद्घाटन सभा के पूर्व शिविर मण्डप का उद्घाटन श्री सुरेन्द्रकुमारजी जैन कोटा ने किया। ध्वजारोहणकर्त्ता श्री महेन्द्रकुमार सुनीलकुमारजी सर्राफ परिवार, सागर थे। इस अवसर पर आचार्य कुन्दकुन्द के चित्र का अनावरण श्री प्रदीपकुमारजी चौधरी किशनगढ, पण्डित टोडरमलजी के चित्र का अनावरण श्री अजितकुमारजी तोतूका जयपुर एवं गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के चित्र का अनावरण श्री दिलीपभाई शाह मुम्बई ने किया।

मंचासीन समस्त अतिथियों का तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट के ट्रस्टी श्री सुमनभाई दोशी एवं श्री अमृतभाई मेहता ने तिलक लगाकर, माल्यार्पण से स्वागत किया। कार्यक्रम का संचालन श्री महीपालजी ज्ञायक बांसवाड़ा ने किया।

शिविर में प्रतिदिन आध्यात्मिकसत्पुरुष गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के टेप व सी. डी. प्रवचन के अतिरिक्त तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर के प्रात: समयसार की चौथी से सातवीं गाथाओं पर एवं प्रसिद्ध विद्वान डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनी के प्रात: समयसार की 19 वीं गाथा पर तथा रात्रि में मोक्षमार्गप्रकाशक पर मार्मिक प्रवचन हुये। रात्रिकालीन प्रथम प्रवचन में पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जैन जबलपुर, पण्डित शैलेषभाई शाह तलौद, डॉ. महेशजी जैन भोपाल, डॉ. विमलजी शास्त्री जयपुर, डॉ. वीरसागरजी जैन दिल्ली, पण्डित अनिलजी शास्त्री भिण्ड, पण्डित सुनीलजी शास्त्री जैनापुरे एवं पण्डित मनीषजी शास्त्री रहली के सारगर्भित प्रवचनों का लाभ मिला।

प्रतिदिन पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल द्वारा निमित्तोपादान, ब्र.यशपालजी जैन द्वारा गुणस्थान विवेचन, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील जयपुर द्वारा पुरुषार्थसिद्धयुपाय, पण्डित सुनीलजी शास्त्री जैनापुरे द्वारा छहढाला, पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर द्वारा नैगमादि सप्त नय, पण्डित मनीषजी शास्त्री खतौली द्वारा क्रमबद्धपर्याय, पण्डित प्रकाशजी छाबड़ा इन्दौर द्वारा गोम्मटसार विषय की कक्षाओं का लाभ मिला।

दोपहर की व्याख्यानमाला में पण्डित शिखरचन्दजी जैन विदिशा, पण्डित गुलाबचन्दजी जैन बीना, पण्डित विरागजी शास्त्री जबलपुर, पण्डित रमेशचन्दजी जैन जयपुर, पण्डित राजेन्द्रजी जबलपुर, पण्डित डॉ. योगेशजी जैन अलीगंज, पण्डित देवेन्द्रकुमारजी सिंगोडी, ब्र. अभिनन्दनजी खनियांधाना एवं पण्डित शैलेषभाई तलौद के प्रवचन हुये।

प्रात: 5.30 बजे की प्रौढकक्षा में पण्डित रूपचन्दजी बण्डा, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा, डॉ. दीपकजी जैन, पण्डित राजेन्द्रजी जैन जबलपुर, पण्डित जवाहरलालजी जैन विदिशा आदि विद्वानों का लाभ मिला।

शिक्षण-शिविर के आमंत्रणकर्त्ता स्व. हीराबेन छोटालाल मेहता की पुण्य स्मृति में हस्ते श्री प्रवीणचन्द्र मेहता सूरत, श्री जगदीशभाई सी. मोदी परिवार मुम्बई, श्री प्रेमचन्दजी बजाज कोटा, श्री नवीनचन्द्र केशवलाल मेहता मुम्बई, स्व. श्री राजमलजी पाटनी की स्मृति में उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रतनदेवी व सुपुत्र श्री अशोक पाटनी कोलकाता थे।

शिविर के अवसर पर श्री आदिनाथ पंचकल्याणक विधान श्री बाबूलालजी सुखलालजी पंचोली थांदला, श्री महीपालजी ज्ञायक बांसवाडा, श्री शिखरचन्दजी नीरजकुमारजी जैन आरोन, श्री प्रमोदजी जैन परिवार सागर, श्री गोपीलालजी बाबूलालजी जैन कुम्भराज-गुना, श्री केशवजी जैन कुरावली, श्री मूलचन्दजी छाबड़ा जयपुर, श्री मगनलालजी मामाजी आरोन ने कराया।

शिविर में साधर्मी जनों की आशातीत उपस्थिति रही। लगभग 1800 मुमुक्षु भाई-बहिनों ने लगभग 17 घण्टे प्रतिदिन चलनेवाली तत्त्वज्ञान की अविरलधारा से अपने जीवन को सफल किया।

सम्पूर्ण शिविर ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा, श्री अमृतभाई मेहता एवं श्री महीपालजी ज्ञायक के निर्देशन में सम्पन्न हुआ।

सम्पादकीय –

मुझे तो इन बातों की खबर ही नहीं 2

नैतिकता और तत्त्वज्ञान की प्रेरक कहानी

(गतांक से आगे...)

कृषिपण्डित बुद्धिसेन ने विद्या एवं बुद्धि में अन्तर बताते हुए कहा ह्न ''यह तो आप जानते ही होंगे कि **अर्जित ज्ञान को विद्या कहते हैं, जो कि पुस्तकों और गुरुजनों से प्राप्त होती है तथा जन्मजात प्रकृति से प्राप्त प्रतिभा को बुद्धि कहते हैं। जिनमें विद्या के साथ वह बुद्धि होती है, उसके तो सोने में सुगंध की कहावत चरितार्थ हो जाती है;** परन्तु तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो **'विद्या से बुद्धि उत्तम होती है'** इस बात की सूचक मैंने पंचतंत्र पुस्तक की एक कहानी सुनी थी, जो इसप्रकार है ह्न

''चार पण्डित बनारस से पढ़कर अपने-अपने घर लौट रहे थे। रास्ते में उन्हें एक मरे हुए सिंह की अस्थियाँ, माँस और चमड़ा आदि सभी अंग बिखरे पड़े मिले। उन चारों में से एक पण्डित बोला ह्न मुझे ऐसी विद्या आती है, जिससे मैं इस मरे हुए सिंह के सभी अंगों को इकट्ठे कर सकता हूँ। दूसरा बोला ह्न मैं इकट्ठे किए अंगों से सिंह को साकार रूप दे सकता हूँ। तीसरा पण्डित बोला ह्न मैं सिंह के साकार रूप को जीवित कर सकता हूँ।

जब तीनों पण्डित अपनी-अपनी करामात दिखाने को आमादा ही हो गये तो चौथा पण्डित, जो बुद्धिमान भी था, उसने कहा ह्न ''ठहरो! पहले हम सब पास में खड़े पेड़ पर चढ़ जाते हैं, फिर वृक्ष पर से ही तुम भी अपनी विद्या का प्रदर्शन करके सिंह को जीवित करना; अन्यथा वह सिंह जीवित होते ही हम सबको मार कर खा जाएगा।''

जब चौथे पण्डित की बात उन तीनों बुद्धिविहीन पण्डितों की समझ में नहीं आई तो चौथा पण्डित तो तुरन्त पेड़ पर चढ़ गया और शेर जीवित होते ही उन तीनों को मारकर खा गया।''

विद्या से बुद्धि की श्रेष्ठता की प्रतीक उक्त कहानी के संदर्भ में ह्न पंचतंत्र के लेखक विष्णु शर्मा ने निम्नांकित श्लोक में भी यही कहा है ह्न

''वरं बुद्धि न सा विद्या, विद्याया बुद्धिरुत्तमा।
बुद्धिहीना विनश्यन्ति यथा ते सिंह कारकाः।

अर्थात् विद्या से बुद्धि श्रेष्ठ होती है, बुद्धिविहीन विद्या घातक होती है। जैसे वे सिंह को जीवित करने वाले पण्डित जीवन से हाथ धो बैठे।''

यह कहानी सुनाकर बुद्धिसेन ने कहा ह्न ''यदि हम अपनी जन्मजात प्राप्त बुद्धिबल से कुछ अच्छे काम कर रहे हैं तो उन्हें मंत्र-तंत्रों का चमत्कार कहकर पाखंडी मंत्र-तंत्र वादियों में पनपते पाखण्डवाद को प्रोत्साहित न करें।''

ह्न ह्न ह्न

बुद्धिसेन ने अपनी आप बीती सुनाते हुए आगे कहा ह्न ''वकील साहब ! यह तो आप जानते ही हो कि मैं भी उसी गाँव में जन्मा हूँ, जहाँ पढ़ाई का कोई साधन नहीं था और मेरे पिताजी नगर के विद्यालय में भेजकर पढ़ा सकें, ऐसी उनकी आर्थिक हालत नहीं थी। इस कारण मैं गुरु मुख से विद्या का विशेष अर्जन तो नहीं कर सका, परन्तु मेरे पूर्व जन्म के संस्कारों से जन्मजात ही मुझे ऐसी प्रतिभा प्राप्त है, जिसकी स्व-पर हित करने के लिए मुझे जरूरत थी। परहित करने और दूसरों को पीड़ा न पहुँचाने की प्रेरणा मुझे तुलसीदासजी के इस कथन से मिली ह्न

'परहित सरस धर्म नहीं माई। परपीड़ा सम नहिं अधमाई।।'

वकील साहब ! **कोई भी व्यक्ति सभी विषयों का विशेषज्ञ नहीं होता। एक विषय का विशेषज्ञ अन्य विषयों में तो लगभग अनभिज्ञ ही होता है,** जो व्यक्ति इस सत्य को समझ लेते हैं, उन्हें अपने अर्जित ज्ञान का अभिमान नहीं होता और वे दूसरों को हीन दृष्टि से नहीं देखते।''

अनपढ़ बुद्धिसेन की बुद्धिमत्ता पूर्ण गंभीर बातें सुनकर विद्याधर अवाक् रह गया। वह सोचने लगा ह्न ''कृषक बुद्धिसेन की यह बात कितनी सटीक है कि ह्न कोई भी व्यक्ति विविध विषयों का विशेषज्ञ नहीं हो सकता। बात तो बुद्धिसेन की शत-प्रतिशत सही है। यदि मुझसे ही कोई पूछले कि ह्न कौन सी फसल कब बोई जाती है? तो मैं भी तो यह नहीं बता सकता।

मैं भले ही कानून का विशेषज्ञ हूँ, पर कानून के सिवाय और मुझे आता ही क्या है? कृषि करना तो दूर, मैं तो एक कप चाय भी नहीं बना सकता। अपने कोट के टूटे बटन भी नहीं टांक सकता। फिर भी पता नहीं क्यों? मैं स्वयं को सबसे बड़ा वकील ही नहीं, सबसे बड़ा विद्वान मानकर अहंकार के आकाश में उड़ानें भरने लगा।

यह स्थिति न केवल मेरी है, मेरे जैसे अपने-अपने विषय के सभी विशेषज्ञों की यही मनोवृत्ति है। जबतक व्यक्ति अपनी इस मनोवृत्ति को नहीं बदलेगा तब तक स्वयं को सबसे बड़ा विद्वान समझता रहेगा। ऐसे लोग अभिमान के आकाश में कटी पतंग की भाँति भटकते ही रहते हैं।''

ह्न ह्न ह्न

विद्याधर ने सोचा ह्न ''पूर्वजन्म के पुण्य के फल में कानून का विशेषज्ञ बनकर भी मैंने गुण्डों और हत्यारों की सुरक्षा करके पाप कार्यों को प्रोत्साहन के सिवाय और किया ही क्या है? पिछले पुण्य के फल खाकर अगले जन्म के लिए पाप के बीज ही बोए हैं।

अब मैं जानबूझकर अपराधियों के बचाव पक्ष के मामले नहीं लूँगा। और अपने वकालत के व्यवसाय से निरपराधियों को सही न्याय दिलाने में ही पूरा प्रयत्न करूँगा।''

वकील विद्याधर ने पुनः विचार किया ह्न ''जैनकुल में जन्म लेने मात्र से ही कोई जैन नहीं हो जाता, यदि सौभाग्य से मेरा जैन कुल में जन्म हो गया है तो अब मुझे धर्म का वह मर्म समझना चाहिए, जिससे मैं अब

तक वंचित हूँ, तभी मेरा जैन होना सार्थक होगा''

वकील विद्याधर को विचारों में डूबा देख बुद्धिसेन ने कहा ह्न ''वकील साहब क्या सोच रहे हो? किन विचारों में डूब गये हो? अधिक सोचने और चिन्ता करने की जरूरत नहीं है। मैं सब समझ गया। आप यह सोच रहे हैं कि 'मुझे वकालत के अलावा कुछ भी तो नहीं आता। वकालत में भी मैंने पापभावों के सिवाय भला काम कुछ भी तो नहीं किया। फिर भी मुझे यह बड़प्पन का अहंकार क्यों? धर्म के क्षेत्र में भी तो मुझे कुछ भी नहीं आता, फिर भी बड़प्पन के चक्कर में कभी धर्म के दो शब्द भी तो नहीं सुने। अब तो मुझे अपने बड़प्पन को बाजू में रखकर धर्म चर्चा सुनना ही होगी।''

वकील साहब बोले ह्न ''अरे! मैं तो तुम्हें 'अंधों में काने राजा' की भाँति गाँव के अनपढ़ व्यक्तियों का मुखिया समझ रहा था; तुम तो मनोविज्ञानी और धर्म के मर्मज्ञ भी हो।''

बुद्धिसेन ने कहा ह्न ''ऐसी कोई बात नहीं है, यह तो मनोविज्ञान की छोटी–मोटी बातें हैं कि मनुष्य कब/क्या सोचता है? बस, ऐसा अनुमान लगाकर ही मैंने कुछ कह दिया है।

बुद्धिसेन ने आगे कहा ह्न ''यह तो आप समझ ही गये होंगे कि ह्न मनुष्य भले ही अपने विषय के विशेषज्ञ हों; परन्तु वे वस्तुतः अन्य विषयों में तो लगभग शून्य ही होते हैं। फिर न जाने क्यों? आप जैसे बहुत कम व्यक्ति अपनी इस कमी का अहसास कर पाते हैं। अधिकांश का अन्तर्रात्मा तो इस कमी को स्वीकार ही नहीं करता। इस कारण वे स्वयं को बहुत बड़ा समझदार और दूसरों को तुच्छ समझने लगते हैं और इसीकारण छोटे–मोटे विद्वानों से तो वे धर्म की बात सीखते नहीं है, और बड़े विद्वानों की बड़ी बातें उनकी समझ में आती नहीं हैं, इसकारण उनका पूरा अमूल्य मनुष्य जीवन मानकषाय के चक्कर में ही चला जाता है।''

बुद्धिसेन की बोधवर्द्धक बातों से वकील विद्याधर को ऐसा लगा कि ''मैंने जीवन का सारा महत्त्वपूर्ण–सारभूत समय वकालत के ज्ञान में यूँ ही बर्बाद कर दिया है। यदि मुझे प्रौढ़ावस्था में ही बुद्धिसेन जैसे धर्मज्ञ का सान्निध्य मिला होता तो मैं भी धर्म और दर्शन के उन रहस्यों का ज्ञाता होता, जिनमें निराकुल सुख–शान्ति के उपाय निहित हैं।''

यही भाव जब विद्याधर ने बुद्धिसेन के समक्ष व्यक्त किया तो बुद्धिसेन ने यह कहा ह्न ''वकील साहब! चिन्ता करने की कोई बात नहीं। इस विषय में **आचार्यों का कहना है कि ह्न 'ज्ञेय पदार्थों के अनुसार ज्ञान नहीं होता, बल्कि ज्ञान पर्याय की तत्समय की योग्यता के अनुसार ज्ञेय पदार्थ ज्ञान के विषय बनते हैं।**' अभी तक के तुम्हारे ज्ञान की पर्याय में वकालत के कानून जानने की ही योग्यता थी, वे ही ज्ञान के विषय बनना थे सो वे ही बनें। अब, जब आपके ज्ञान में 'तत्त्वज्ञान' के ज्ञेय बनने की योग्यता आई तो तुम्हारी रुचि धर्म का मर्म समझने के लिए स्वतः जाग्रत हो गई।

इस संदर्भ में जैनदर्शन का यह सिद्धान्त समझने योग्य है कि ह्न **''प्रत्येक ज्ञान की पर्याय का ज्ञेय सुनिश्चित है। कौनसी ज्ञान की पर्याय किससमय किस ज्ञेय को जानेगी? ह्न सब सुनिश्चित है।'' ज्ञान व ज्ञेय का ऐसा ही स्वतंत्र ज्ञेय–ज्ञायक संबंध है।**

वकील विद्याधर ने आश्चर्य प्रगट करते हुए कहा ह्न ''यह तो गजब का सिद्धान्त है, यदि वस्तुतः यह बात है तब तो जीव को जानने की जल्दबाजी करने की भी जरूरत नहीं रहेगी। पर बात गंभीर है, इसे ऐसे चलते–फिरते या खड़े–खड़े नहीं समझा जा सकता। इसके लिए तो जैनदर्शन के गहराई से अध्ययन–मनन की जरूरत है; किन्तु चिन्ता की बात इसलिए भी नहीं है कि जब बुद्धिसेन जैसे अनपढ़ आदमी ने धर्म के मर्म को समझकर अपना मनुष्य जीवन सार्थक कर लिया और अगले जन्म के लिए सुख–शान्ति के बीज बो लिए तो मैं क्यों नहीं समझ सकूँगा?

हाँ, अब मुझे धर्म का मर्म जानने के लिए अपने वकालत के बड़प्पन को एक बाजू रखकर बुद्धिसेन से ही पूछना होगा कि उसने धर्म के प्रयोजनभूत तत्त्वों को जानने के लिए क्या किया और एतदर्थ मुझे क्या करना होगा?''

विद्याधर के पूछने पर बुद्धिसेन ने बताया कि ह्न ''आत्महित के लिए बहुत भारी शास्त्रीय पाण्डित्य की जरूरत नहीं है, शास्त्र का अधिक ज्ञान तो मुझे भी नहीं है, फिर भी नियमित रूप से सामूहिक स्वाध्याय में जाने से मैं धर्म के मर्म को समझने लगा हूँ। सर्वप्रथम बात यों बनी कि ह्न ''एक दिन मैं पिताजी के कहने से उनके साथ देव–दर्शन करने मन्दिर चला गया तो मुझे यह जानने की इच्छा हुई कि ह्न 'ये देव कौन हैं? सब लोग प्रतिदिन इनके दर्शन क्यों करते हैं? क्या लाभ होता है, इनके दर्शन से?'

मैंने पिताजी से ये सब प्रश्न पूछे तो उन्होंने कहा ह्न 'तू मेरे साथ स्वाध्याय में चला कर। वहाँ पण्डितजी यही सब तो समझाते हैं। पण्डितजी के आ जाने से अब तो पाठशाला भी खुल गई है। पाठशाला में पण्डित बच्चों, बूढ़ों और महिलाओं को प्रयोजन भूत सभी बातों को समझाते हैं। और तो सब वहाँ बताते ही हैं, साथ में यह भी बताते हैं कि यह संसारी दुःखी जीव सुखी कैसे हों; आत्मा से परमात्मा कैसे बनते हैं? आदि।

पिताजी की प्रेरणा से मैंने पहले तो प्रतिदिन पाठशाला जाना प्रारंभ किया और बाद में सामूहिक स्वाध्याय में भी जाने लगा।

इसी का फल है कि मैं बहुत कुछ धर्म का मर्म समझने लगा हूँ। अगर तुम्हें धर्म का मर्म जानने की लगन लगी है तो तुम्हें भी वही सब करना होगा जो मैंने किया है।

बुद्धिसेन से मार्गदर्शन और प्रेरणा पाकर वकील विद्याधर ने यथासंभव प्रतिदिन देव–दर्शन और स्वाध्याय करने का संकल्प ले लिया। नियमित स्वाध्याय से कुछ ही दिनों में उसे ऐसा लगने लगा कि जैनदर्शन के सिद्धान्त तो अद्भुत हैं, **मुझे तो इन बातों की खबर ही नहीं थी।**●

कहानी...

मानना ही पड़ेगा

ह्न जयन्तिलाल जैन, नौगामा

व्यापार की प्रकृति ही कुछ ऐसी होती है कि कभी–कभी तो ग्राहकों की भीड़ एक साथ बढ जाती है तो कभी बहुत इन्तजार करने के बावजूद भी ग्राहक के दर्शन तक नहीं हो पाते।

गर्मियों की दोपहर में छगनभाई भी बैठे–बैठे उकता चुके थे, लेकिन एक भी ग्राहक आने का नाम ही नहीं ले रहा था। अचानक अपनी दुकान में छगनभाई को कुछ खुसर–फुसर सुनाई दी। कहीं कोई चूहा तो सामान नहीं कुतर रहा ? नहीं–नहीं, ऐसी तो कोई बात नहीं थी। दरअसल बात यह थी कि दुकान में तगारे में भरे हुए नारियलों में से एक नारियल अपने ही पास वाले तगारे में रखे हुए गोले से कुछ कह रहा था। छगनभाई ने भी अपने कान उधर कर लिये। 'भाई साहब ! नमस्कार, मैंने आपको पहली बार देखा है। क्या आप अपना कुछ परिचय मुझे देंगे ?'

'क्यों मजाक करते हो ? पूछना ही है, तो कुछ और पूछो ना' ह्न गोला बोला।

'नहीं–नहीं इसमें मजाक की क्या बात है ? मैं सचमुच में आपको नहीं जानता'ह्न नारियल ने कहा।

गोला चकराया, उसने सोचा ह्न'यह नारियल ही है या कोई और ? जो ऐसी बातें कर रहा है, है तो यह नारियल ही, फिर ऐसी बात क्यों पूछ रहा है ? खैर होगा।' उसने गंभीर होते हुए कहा ह्न 'अरे भाई ! तुममें और मुझमें फर्क ही क्या है ? जो मैं हूँ, वह तुम हो और जो तुम हो, वही मैं हूँ। मैं और तुम एक जैसे ही हैं फिर तुम मुझे कैसे नहीं जानते ?'

'मैं कुछ समझा नहीं। मैं और आप एक जैसे कहाँ हैं ? हममें तो दिन–रात का अन्तर है। आप तो गोल हो, दिखने में भी सुन्दर हो और मैं तो किसी जटाधारी बाबा कि तरह लाल और नुकीला हूँ।'ह्न नारियल ने कहा।

'जो तुम्हें दिखाई दे रहा है, वह वास्तव में तुम हो ही नहीं। वह तो तुम्हारा शरीर है। तुम अपने अंतरंग में झाँक कर देखो। तुम भी मेरी तरह सुन्दर व गोल हो, सफेदी व मिठास से भरपूर हो'ह्न गोले ने उत्तर दिया।

नारियल ने कहाह्न 'ऐसा कैसे हो सकता है ? मैं आपकी बात नहीं मानता, आप सरासर गलत कह रहे हैं।'

'अरे ! तुम तो उस अज्ञानी की तरह बात कर रहे हो, जो इस बात को स्वीकार ही नहीं करता कि वह वर्तमान में भी द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म से भिन्न, ज्ञान और आनन्दस्वरूप शुद्ध आत्मा है'ह्न गोले ने नारियल को समझाया।

'कौनसा आत्मा ? कैसा आत्मा ?'ह्न नारियल ने आश्चर्य व्यक्त किया।

गोले ने कहा ह्न 'सुनो मैं तुम्हें एक दिलचस्प वाकिया सुनाता हूँ, जो मेरे साथ घटित हुआ।'

गोले ने कहना शुरू किया ह्न 'आज से दो दिन पहले कि बात है। यहाँ सुबह–सुबह सेठ जिनेन्द्रप्रसादजी आये और छगनभाई से बोले ह्न ''छगनभाई एक अच्छा सा गोला तोल देना। मंदिरजी में चढ़ाना है।'' छगनभाई ने मुझे उठाया और तोल कर जिनेन्द्रप्रसादजी के हाथों में दे दिया। बस फिर क्या था ? जिनेन्द्रप्रसादजी मुझे मंदिर में ले गये और मुझे भगवान के चरणों में चढ़ा दिया।

'फिर क्या हुआ ? आप मंदिर गये थे, फिर यहाँ वापस कैसे आ गये ?'ह्न नारियल ने अधीर होता हुए पूछा।

गोले ने कहा ह्न 'धैर्य रखो, सब कुछ बताता हूं। हूआ यूँ कि पूजन की समाप्ति के बाद धर्मसभा का आयोजन हुआ। संयोग से उस दिन मुनिराज पधारे हुए थे, उनके धर्मोपदेश में वे कह रहे थे कि ह्न यह समयसार ग्रंथ अशरीरी होने का शास्त्र है। संसारी आत्मा द्रव्यकर्म, भावकर्म और नोकर्म से संयुक्त होने पर भी वर्तमान में ही इन सबसे कैसे भिन्न है ? यह बात इसमें अच्छी तरह से समझायी गयी है।

आत्मा के त्रिकाली ध्रुव सामान्य द्रव्यस्वभाव का विचार किया जाये तो उसमें शरीर तथा द्रव्यकर्मों ने तो प्रवेश किया ही नहीं है; परन्तु मोह–राग–द्वेष आदि विकारी भावों ने भी प्रवेश नहीं किया है।

शरीर तथा द्रव्यकर्म तो स्पष्टरूप से पौद्गलिक हैं। पुद्गलद्रव्य कभी जीव द्रव्यरूप नहीं हो सकता तथा जीवद्रव्य कभी पुद्गलद्रव्यरूप नहीं हो सकता। सभी द्रव्यों का ऐसा ही भिन्न–भिन्न रहने का स्वभाव है। एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य में अत्यंताभाव है। मोह–राग–द्वेष के भाव भी जीवद्रव्य की क्षणिकपर्याय में हैं तथा पर के संयोग से, पुद्गलकर्म के उदयपूर्वक प्रगट होने वाले औपाधिक भाव हैं इसलिए वे भी आत्मस्वभाव से भिन्न हैं।

इसप्रकार स्वभावदृष्टि से विचार किया जाये तो प्रत्येक आत्मा स्वयं भगवान है, शुद्ध है, अनन्त गुणों एवं शक्तियों का संग्रहालय अनन्त प्रभुता सम्पन्न महाप्रभु है, परिपूर्ण है, उसमें पर एवं पर्याय का प्रवेश ही नहीं है। इसप्रकार पूर्ण विज्ञानघन है, ज्ञान और आनन्दामृत से परिपूर्ण है।

भाई तू स्वयं भी ऐसा ही आत्मा है। परद्रव्य ने तुझमें प्रवेश किया ही नहीं है। तू अभी भी एक टंकोत्कीर्ण एक ज्ञायकभाव है। वही वास्तविक आत्मा है, जो कि तू स्वयं है।'

'मुनिराज के उपदेश को कितने ही लोगों ने तो स्वीकार किया लेकिन मुनिराज के जाने के बाद कुछेक अज्ञानी ऐसे भी थे जो इस बात को मानने के लिए तैयार ही नही थे। नारियल ! तू भी तो उन अज्ञानियों जैसा ही है।'ह्न गोले ने कहा।

'चलो आप कहते हैं तो मैं मान लेता हूँ; आगे ज्ञानी बनने की कोशिश करूँगा। हाँ, एक बात मेरी समझ में नहीं आई कि आप मंदिर में गये थे फिर यहाँ वापिस कैसे आ गये ?'ह्ननारियल ने पूछा।

गोले ने कहना शुरू किया ह्न'मुझे मंदिर से चढ़ावे के साथ मन्दिर का सेवक अपने घर ले गया। उसने अन्य गोलों के साथ मुझे भी एक थैले में भरा और छगनभाई को बेच दिया। इसतरह मैं घूम–फिर कर पुन: वापस उसी जगह आ गया।'

दोनों की बात चल ही रही थी कि एक ग्राहक आकर बोला ह्न 'सेठ साहब सूखा नारियल है क्या ?'

'हाँ है।'ह्न छगनभाई ने नारियल के तगारे की तरफ इशारा किया।

ग्राहक ने उसी नारियल को उठाते हुए पूछा ह्न'खरा है या खोटा ?'

'बिल्कुल खरा है साहब, विश्वास न हो तो फोड़कर देख लीजिए।'ह्न छगनभाई बोला।

'मैं यहीं फोड़कर देखता हूँ, खरा होगा तो पैसे दूँगा।'ह्न ग्राहक ने कहा।

'इधर लाओ, मैं स्वयं इसमें से अभी गोला निकालकर तुम्हें बतलाता हूँ।'ह्न कहते हुए छगनभाई ने ग्राहक के हाथ में से नारियल लिया और उसे घुमाते हुए जमींन पर ठोकने लगा। कुछ ही देर में गोला नरेटी से अलग हो गया और खड़खड़ाने लगा। छगनभाई ने नारियल ग्राहक के हाथ में पकड़ाया और कहा ह्न 'लो अब गोला अलग हो गया है।'

ग्राहक ने खड़खड़ाया वास्तव में गोला नारियल से अलग था।

ग्राहक स्वभाव से ही शंकालु होते हैं। वह बोलाह्न'गोला तो अलग है लेकिन कहीं अन्दर से खराब निकला तो'

'तो फोड़कर देख लो ना'ह्न छगनभाई ने कहा।

ग्राहक ने नारियल को जोर से फर्श पर टकराया तब नरेटी के दो टुकड़े हो गये और वह अन्दर से साफ–सुथरा गोला निकला। यानि कि वही नारियल गोले में बदल चुका था। शरीर के तो टुकड़े हो गये; लेकिन अन्दर का आत्मा अर्थात् गोला वैसा का वैसा ही सलामत रहा। अब उस नारियल के जो कि अब गोले के रूप में परिणत हो चुका था, उसके आश्चर्य का ठिकाना ही नहीं रहा। कभी वह गोला स्वयं को देखता कभी अपने मृत शरीर को और कभी उस गोले को जिसके साथ वह पहले चर्चा कर रहा था। उसकी ऐसी अवस्था देखकर पहले वाला गोला बोला ह्न

'क्या अब भी तुम मानने के लिये तैयार नहीं हो कि तुम भी मेरी ही तरह मिठास से भरे हो, सफेद गोले हो और तुममें तथा मुझमें कोई अन्तर नहीं है ?'ह्नपहले वाले गोले ने पूछा।

'अब तो मानना ही पड़ेगा। हाथ कंगन को आरसी क्या ?'ह्न नारियल से अलग हुआ गोला बोला।

'एक बात और सुन लो ! तुम्हारे ऊपर जो यह लाल परत बनीं हुई है, वह भी तुम्हारा वास्तविक सत्य नहीं है। वह तो राग (भावकर्म) के स्थान पर है। तुम तो उससे भी भिन्न हो। सफेदी अर्थात् आनन्द और मिठास से भरपूर हो। ज्ञान के पुंज आत्मा के समान हो। वही तुम्हारा वास्तविक सत्व है।'ह्न पहले वाले गोले ने कहा।

'अब तो मानना ही पड़ेगा। आपकी बात को झुठलाया कैसे जा सकता है ? भई वाह, आप ही मेरे सच्चे गुरु हैं। गुरु हो तो आप जैसा'ह्न उस गोले ने कहा और वह उस ग्राहक के साथ चला गया जो उसे खरीदने के लिये आया था। उस ग्राहक के झोले में पड़ा–पड़ा भी वह सोच रहा था ह्न

'चाहे जहाँ भी क्यों न रहूँ, किसी भी हालत में क्यों न रहूँ। मैं तो शरीर से भिन्न, छाल से भिन्न, गोला था, गोला हूँ और गोला ही रहूँगा। उस ज्ञानी आत्मा की भाँति जो सदाकाल अपने आपको द्रव्यकर्म, भावकर्म और नोकर्म से भिन्न ज्ञानमात्र ज्ञायकरूप ही अनुभव करता है।'

छगनभाई जो कि काफी देर से नारियल और गोले की बात को चुपचाप सुन रहा था और सारे घटनाक्रम को देख रहा था काफी प्रभावित हुआ। ऐसी भेदविाान की तात्विक बातें तो उसने पहली बार सुनीं थीं।

वह सोचने लगा ह्न'एक गोला एक ही दिन मंदिर में जाकर भेदविज्ञान की इतनीं सारी बातें सीख आया। मैं यदि रोजाना मंदिर में जाउँगा तो मुझे कितना लाभ होगा ? मुझे रोजाना मंदिर अवश्य जाना चाहिए'

अगले दिन से ही छगनभाई ने मंदिर में जाना प्रारम्भ कर दिया। आप भी जाइये और भेद विज्ञान प्रगट कीजिए। ●

अष्टान्हिका महापर्व सानन्द सम्पन्न

1. सागर (म.प्र.) : यहां श्री 1008 महावीर जिनालय में पर्व के अवसर पर दिनांक 22 से 29 जुलाई तक पंचमेरू–नंदीश्वर विधान का आयोजन स्थानीय विद्वान श्री अखिलेशजी शास्त्री द्वारा सम्पन्न करवाया गया। इस अवसर पर श्री मन्नूलालजी वकील के विधान की जयमाला पर प्रवचन हुए। वीर शासन जयन्ती भी हर्षोल्लास पूर्वक मनायी गयी।

2. अजमेर (राज.) : यहाँ श्री सीमन्धर जिनालय में पंचमेरू नंदीश्वर विधान का आयोजन पण्डित अश्विनजी नानावटी बाँसवाड़ा एवं पण्डित राजकुमारजी जबलपुर के निर्देशन में श्री पूनमचंदजी लुहाड़िया, नवलजी दोशी, सुमनजी बड़जात्या एवं सरोजजी पाण्ड्या के सहयोग से सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा के प्रवचनों का लाभ समाज को मिला। साथ ही जिनेन्द्र भक्ति, सी.डी. प्रवचन इत्यादि अनेक कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

3.लूणदा (राज.) : यहाँ श्री पंचबालयति दिगम्बर जैन मंदिर में दिनांक 22 से 29 जुलाई तक पर्व के अवसर पर नवलब्धि विधान का आयोजन पण्डित आदित्यजी शास्त्री खुरई, पण्डित संदीपजी शास्त्री जयपुर एवं स्थानीय विद्वान पण्डित अंकितजी लूणदा द्वारा श्री चांदमलजी केरोत, ललितजी किकावत एवं शांतिलालजी केरोत के सहयोग से सम्पन्न कराया गया।

इस अवसर पर पण्डित सुनीलजी शास्त्री प्रतापगढ़ एवं पण्डित निलयजी शास्त्री बाँसवाड़ा के तीनों समय प्रवचनों का लाभ मिला। साथ ही जिनेन्द्र भक्ति व अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रम भी आयोजित किये गये।

4. खड़ैरी (म.प्र.) : यहाँ अष्टान्हिका महापर्व पर जैन युवा एवं महिला फेडरेशन के संयुक्त तत्त्वावधान में पंचमेरू–नंदीश्वर विधान का आयोजन पण्डित नरोत्तमदासजी एवं पण्डित अभयजी शास्त्री द्वारा सम्पन्न किया गया। इस अवसर पर पण्डित गोविंदरामजी, पण्डित ताराचंदजी एवं जैन युवा शास्त्री परिषद के विद्यार्थियों के प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ। साथ ही अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रम भी सम्पन्न कराये गये।

5. कैराना (उ.प्र.) : यहाँ श्री दिगम्बर जैन मंदिर में 20 से 22 जुलाई तक सुबोधजी की पुण्यस्मृति में पंच परमेष्ठी विधान का आयोजन किया गया। विधान के कार्य पण्डित अश्विनजी नानावटी ने सम्पन्न कराये। इस अवसर पर उनके द्वारा ही दोनों समय प्रवचन, कक्षाओं एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों का भी आयोजन किया गया।

6. मकरोनिया (सागर–म.प्र.) : यहाँ श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन मन्दिर ट्रस्ट, अंकुर कॉलोनी में महापर्व के अवसर पर समाज द्वारा बृहन्नंदीश्वर मंडल विधान का आयोजन पण्डित अरूणकुमारजी मोदी के निर्देशन में किया गया। मंगल कलश श्री एन.के.जैन ने विराजमान किया।

इस अवसर पर जिनेन्द्र–भक्ति, कक्षाएँ व अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रम भी आयोजित किये गये। इस प्रसंग पर समाज की ओर से 3400 रूपये की राशि पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट को प्रदान की गई।

7. खनियांधाना (म.प्र.) : यहाँ श्री नंदीश्वर जिनमंदिर में समाज द्वारा नंदीश्वर मंडल विधान का आयोजन ब्र.अमितजी मोदी विदिशा के सानिध्य में कराया गया। इस अवसर पर श्री नंदीश्वर विद्यापीठ के छात्रों को पण्डित श्री प्रवीणजी जैन, पण्डित मनीषजी शास्त्री बरेली, पण्डित सचिनजी अकलूज, पण्डित मुक्तेशजी पिड़ावा एवं पण्डित प्रमोदजी का निर्देशन मिला।

तत्त्वचर्चा

छहढाला का सार 13

– डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे)

दर्शन-ज्ञान-चारित्र में मिथ्यापना मिथ्यात्व के कारण आता है; मिथ्यात्व गया तो तीनों एक साथ ही सम्यक् हो जाते हैं।

आजकल बिक्री बढ़ाने के लिए व्यापारियों ने एक नई पद्धति चलाई है कि एक वस्तु खरीदो तो उसीप्रकार की दूसरी वस्तु नि:शुल्क प्राप्त होगी। इसीप्रकार यहाँ है कि आप सम्यग्दर्शन प्राप्त करने के लिये पुरुषार्थ कीजिये तो उक्त पुरुषार्थ से ही सम्यग्दर्शन के साथ-साथ सम्यग्ज्ञान की भी प्राप्ति हो जायेगी।

तात्पर्य यह है कि ज्ञान को सम्यग्ज्ञान होने के लिये अलग से पुरुषार्थ नहीं करना पड़ता।

आप कह सकते हैं कि व्यर्थ के इस व्यायाम से क्या लाभ है? इससे अच्छा तो यही है कि उस वस्तु की आधी कीमत कर दी जावे।

आधी कीमत करने से बिक्री बढ़ेगी नहीं; अपितु आधी रह जायेगी; क्योंकि माल तो उतना ही जायेगा, पर पैसे आधे आयेंगे।

यदि किसी को एक समयसार चाहिये; तो वह आधी कीमत कर देने पर भी एक समयसार ही खरीदेगा; क्योंकि उसे दो ग्रन्थों की आवश्यकता ही नहीं है।

यदि एक के साथ एक फ्री मिलेगा तो दो ले लेगा और दूसरा किसी को भेंटस्वरूप दे देगा। इसतरह एक की जगह दो समयसार बिक जायेंगे और एक समयसार ऐसे व्यक्ति के पास पहुँच जायेगा कि जिसके पास पहुँचाना संभव ही नहीं था; वह तो खरीदनेवाला था नहीं; क्योंकि उसे समयसार की आवश्यकता ही नहीं थी। एक के साथ एक वस्तु फ्री मिलने का ऐसा मनोवैज्ञानिक आकर्षण है कि व्यक्ति उस पर आकर्षित हुये बिना नहीं रहता।

इसी मनोवैज्ञानिक आकर्षण का प्रयोग यहाँ पण्डित दौलतरामजी ने किया है कि सम्यग्दर्शन प्राप्ति का पुरुषार्थ करे तो सम्यग्दर्शन के साथ-साथ सम्यग्ज्ञान भी प्राप्त हो जायेगा, अनन्तानुबंधी कषाय चौकड़ी चली जाने से चारित्र गुण में निर्मलता और सम्यक्-पना आ जायेगा।

वस्तुस्थिति ऐसी है कि सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के पहले पाँच लब्धियाँ होती हैं। इनमें तीसरी लब्धि है देशनालब्धि। देशनालब्धि में भगवान आत्मा को, सात तत्त्वों को सर्वज्ञ की वाणी सुनकर या उनकी वाणी के अनुसार लिखे गये शास्त्रों को पढ़कर या उनके मर्म को समझनेवाले ज्ञानी धर्मात्माओं से सुनकर समझा जाता है।

यद्यपि उक्त समझ भी सत्यज्ञान है; तथापि जब तक आत्मानुभूति नहीं हो जाती, तब तक वह सत्यज्ञान भी सम्यग्ज्ञान नाम नहीं पाता। आत्मानुभूति के काल में उक्त सही जानकारी सम्यग्ज्ञान के रूप में और उसी का श्रद्धान तथा आत्मा में अपनापन सम्यग्दर्शन के रूप में परिणमित हो जाता है।

यही कारण है कि सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान की उत्पत्ति एक साथ होती है, फिर भी ये दोनों क्रमश: श्रद्धा गुण और ज्ञान गुण की पर्यायें हैं; इसलिये अन्य-अन्य ही हैं।

एक यात्री को पेट में भयंकर दर्द हुआ और वह तड़फने लगा; तब सामने बैठे यात्री ने अपनी जेब से एक पुड़िया निकाली और कहा ह्न भैया ! यदि यह दवाई खाओंगे तो तुम्हारा दर्द ठीक हो सकता है।

तब उसने कहा ह्न तुम जैसे बहुत देखे हैं, मैं सारे हिन्दुस्तान का चक्कर काट चुका हूँ, अनेकों बड़े-बड़े डॉक्टरों को दिखाया है; परन्तु कोई भी मेरा पेटदर्द ठीक नहीं कर पाया और तुम ...।

इसने कहा ह्न भैया ! इसमें क्या तकलीफ है ? मैं तुमसे पैसा तो माँग नहीं रहा हूँ। मुफ्त की पुड़िया है, खाकर देख लो, ठीक हो जायेगा तो अच्छा है, नहीं हुआ न सही।

ऐसा कहते हुये उसने वह पुड़िया उसके हाथ में जबरदस्ती रख दी। इसने अरुचिपूर्वक ले तो ली, लेकिन धीरे से वहीं छोड़ दी, वह नीचे गिर गई।

बहुत देर तक वह पुड़िया वहीं नीचे पड़ी रही। जिसने पुड़िया दी थी, वह रेल से अगले स्टेशन पर उतर गया।

उसके बाद जब उसे बहुत दर्द हुआ और कोई इलाज नहीं दिखा तो उसके मन में आया कि इस पुड़िया को खाकर देखूँ।

तब उसने वह पुड़िया खायी और सचमुच पाँच मिनिट में दर्द ऐसा गायब हुआ कि जैसे गधे के सिर से सींग गायब हो गया हो।

अब वह आदमी सामने नहीं है, उससे पूछा भी नहीं था कि वह कौन से गाँव का है और क्या नाम है? न मालूम पुड़िया में क्या था, कैसी दवाई थी ? कुछ पता नहीं।

अब उसको उस दवाई पर पक्की श्रद्धा हो गई; क्योंकि अब वह उसका अनुभव कर चुका है; अत: अब उस देनेवाले की तलाश करता है, समाचर-पत्रों में और टी. वी. पर विज्ञापन देता है। सब तरह से उसकी खोज करता है; क्योंकि उसे यह पता नहीं है कि उस पुड़िया में क्या था, उस दवा का नाम क्या था ?

अब दवा के साथ-साथ उस व्यक्ति पर भी अटूट विश्वास हो गया है। कुछ-कुछ विश्वास तो पहले भी था, अन्यथा वह उस दवाई को खाता ही नहीं; किन्तु खाने के बाद आराम होने पर जैसा अटूट विश्वास हुआ है, वैसा पहले नहीं था ह्न यह बात भी परमसत्य है; क्योंकि होता तो दवाई उसी समय खा लेता।

ज्ञानीजनों ने करुणा करके सीख दी और हमने उपेक्षा से उड़ा दी। वह सीख वहीं पर पड़ी रही। दो-चार बातें कान में पड़ गई थी, जब भयंकर पीड़ा हुई और कोई रास्ता नहीं दिखा, तब वह रास्ता अपनाया और थोड़ी शान्ति प्राप्त हुई। तो अब उन ज्ञानीजनों की तलाश करते हैं।

यद्यपि गुरुमुख से प्राप्त ज्ञान तो पहिले भी था, लेकिन जब पक्की श्रद्धा हुई, तब उस ज्ञान का नाम सम्यग्ज्ञान पड़ा। सात तत्त्व उसने आज ही नहीं सीखे हैं, वे तो पहले भी सीखे थे और पर से भिन्न आत्मा है ह्न यह

भी पहले सुना था। छहढाला की पंक्तियाँ बराबर रटीं थीं। अम्माजी ने सारी जिंदगी पाठ किया था। लेकिन वह समझ में नहीं आया तो नहीं आया। लेकिन जिस दिन वह सम्यग्दर्शन पैदा होगा, तो यही ज्ञान सम्यग्ज्ञान में परिणमित हो जायेगा। दृष्टि मिलनी चाहिए।

हमारी भी यही हालत थी, हम शास्त्री हो गये थे, न्यायतीर्थ हो गये थे, रोजाना प्रवचन करते थे, बिना चैलेंज के कोई प्रवचन समाप्त नहीं होता था। न्यायशास्त्र पर पूरा अधिकार था, पर तत्त्वज्ञान से शून्य ही थे। जिस दिन स्वामीजी से यह तत्त्वज्ञान मिला, उस दिन हमारा वह सारा ज्ञान सम्यग्ज्ञान के रूप में परिणमित हो गया। यह सौभाग्य सबको नहीं मिलता। यदि आपको भी रुचि जग गई तो सबकुछ ए. बी. सी. डी. से आरंभ करना होगा। छहढाला की क्लास में बैठना पड़ेगा।

देशनालब्धि पहले होती है अर्थात् गुरु के मुख से सुनकर, शास्त्र पढ़कर सात तत्त्व और भगवान आत्मा समझ में पहले आता है और आत्मा की अनुभूति बाद में होती है।

कानून बनने की एक प्रक्रिया है। पहले कानून के विशेषज्ञों से बिल बनवाया जाता है, फिर उसे प्रधानमंत्री केबिनेट में स्वीकृत कराता है। इसके बाद संसद में बहस होती है, बिल पास होता है। अन्त में उसे राष्ट्रपति के पास स्वीकृति के लिये भेजा जाता है।

जब राष्ट्रपति उस बिल पर हस्ताक्षर कर देते हैं, तब वह बिल कानून बन जाता है। तात्पर्य यह है कि सारी प्रक्रिया प्रधानमंत्री सम्पन्न करता है; पर कानून राष्ट्रपति के हस्ताक्षर से बनता है।

इसीप्रकार सात तत्त्वों को समझने की सारी प्रक्रिया ज्ञान में सम्पन्न होती है; परन्तु आत्मानुभूतिपूर्वक श्रद्धा की स्वीकृति बिना सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान नहीं होता।

सभी निर्णय प्रधानमंत्री करते हैं, संसद करती है, महिनों तक बहस होती है, अखबारों में लेख छपते हैं ह्न यह सब वर्षों तक चलता है और राष्ट्रपति पूर्णत: निर्विकल्प बने रहते हैं।

उसीप्रकार ज्ञान में संपूर्ण प्रक्रिया चलती रहती है। शास्त्रपठन, उपदेशश्रवण, तत्त्वमंथन, चिन्तन, चर्चा–वार्ता सबकुछ वर्षों तक चलता रहता है और राष्ट्रपति के समान श्रद्धा गुण पूर्णत: निर्विकल्प बना रहता है।

जब ज्ञान में पक्का निर्णय हो जाता है; तब आत्मानुभूतिपूर्वक श्रद्धा गुण पर में से अपनापन तोड़कर अपने त्रिकाली ध्रुव भगवान आत्मा में अपनापन स्थापित कर लेता है और सम्यग्दर्शन हो जाता है; उसी समय ज्ञान भी सम्यग्ज्ञानरूप हो जाता है।

अब सम्यग्ज्ञान के भेद–प्रभेदों की चर्चा करते हैं ह्न

सम्यग्ज्ञान को प्रमाण कहते हैं और वह सम्यग्ज्ञान पाँच प्रकार का है ह्न सुमति, सुश्रुत, सुअवधि, मन:पर्यय और केवलज्ञान।

प्रमाण परोक्ष और प्रत्यक्ष के भेद से दो प्रकार का होता है।

उक्त पाँच ज्ञानों में सुमति और सुश्रुत ज्ञान परोक्ष प्रमाण हैं, सुअवधि और मन:पर्यय ज्ञान एकदेश प्रत्यक्ष प्रमाण हैं और केवलज्ञान सकल प्रत्यक्ष प्रमाण है।

इनमें से मति और श्रुतज्ञान में इन्द्रिय और मन निमित्त होते हैं और अवधि व मन:पर्यय ज्ञान इन्द्रिय और मन के सहयोग के बिना द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव की मर्यादा में स्पष्ट रूप से जानते हैं। सम्पूर्ण पदार्थों के अनन्त गुण और अनन्तानन्त पर्यायों को एक साथ अत्यन्त स्पष्ट रूप से केवलज्ञान जानता है।

जब केवलज्ञान में भूत, भविष्य और वर्तमान की सभी पर्यायों को जान लिया जाता है ह्न ऐसी स्थिति में यह भी सुनिश्चित मानना होगा कि कौनसी पर्याय किस समय होगी।

भूतकाल की पर्यायें तो हो चुकी हैं और वर्तमान की भी हो ही रही है; अत: उनके निश्चित मानने में तो कोई दिक्कत नहीं है; किन्तु भविष्य की पर्यायें तो अभी होना हैं; अत: उन्हें निश्चित मानने में ऐसा लगता है कि यदि भविष्य निश्चित है तो फिर हमारे हाथ में तो कुछ रहा ही नहीं।

अरे भाई ! आदिनाथ भगवान ने तो यह भी बता दिया था कि यह मारीच का जीव अन्तिम तीर्थंकर महावीर होगा।

चौथा काल एक कोड़ाकोड़ी सागर का होता है। मारीचि चौथे काल के प्रारम्भ में था और महावीर चौथे काल के अन्त में हुये हैं। इसप्रकार महावीर और मारीच के बीच एक कोड़ाकोड़ी सागर का अंतर है।

महावीर की माँ का नाम त्रिशला और पिता का नाम सिद्धार्थ होगा ह्न आदिनाथ की दिव्यध्वनि में यह भी आ गया था।

इसका अर्थ यह हुआ कि त्रिशला की शादी राजा सिद्धार्थ से होगी ह्न यह बात एक कोड़ाकोड़ी सागर पहले ही निश्चित थी; अन्यथा आदिनाथ जानते कैसे ?

मान लो कि यह तो नक्की था कि सिद्धार्थ की शादी त्रिशला से होगी; पर किस दिन होगी ह्न यह तो सिद्धार्थ के हाथ में ही होगा न। यदि वे चाहते कि मैं चार साल बाद शादी करूँगा तो ...।

अरे भाई ! भगवान महावीर का जीव सोलहवें स्वर्ग में था और उसकी आयु पूरी हो रही थी। यदि सिद्धार्थ सुनिश्चित समय पर शादी नहीं करते तो क्या होता ? उतने समय महावीर का जीव कहाँ रहता ? तात्पर्य यह है कि समय भी सुनिश्चित था और आदिनाथ के केवलज्ञान में जान लिया गया था।

तात्पर्य यह है कि सबकुछ नक्की है।

इसप्रकार की अनेकानेक भविष्यवाणियों से प्रथमानुयोग भरा पड़ा है। भविष्य निश्चित नहीं मानने पर सर्वज्ञता तो संकट में पड़ ही जायेगी, प्रथमानुयोग पर भी प्रश्नचिह्न लग जायेगा।

हम यह तो सहजभाव से स्वीकार कर लेते हैं कि केवली भगवान भविष्य की सभी बातें जान लेते हैं, पर हमारा मन यह स्वीकार नहीं कर पाता कि भविष्य में होनेवाली घटनायें भी सुनिश्चित हैं; क्योंकि हमें ऐसा लगता है कि सबकुछ नक्की है तो फिर हमने क्या किया। वस्तुत: बात यह है कि हम अपने कर्तृत्व के अभिमान को नहीं छोड़ना चाहते। **(क्रमश:)**

17 अगस्त 2007, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

हाँ या ना ?

1. तीर्थंकर और गणधर देव ने जो कार्य किया है। क्या आप भी वैसा ही कार्य करना चाहते हैं ?
2. क्या आप तत्त्वप्रचार एवं ज्ञानदान करना चाहते हैं ?
3. क्या आप शाकाहार और अहिंसा का प्रचार करना चाहते हैं ?
4. क्या आप अपने बच्चों को संस्कारित और सुखी देखना चाहते हैं ?
5. क्या आप अपने सुखद भविष्य का रिजर्वेशन कराना चाहते हैं ?

यदि आपका जवाब हाँ हैं तो आप आज ही दिव्यध्वनि प्रचार-प्रसार योजना के सदस्य बनिये।

सदस्य बनने के लिये अपने मोबाइल से **D.P.P.T.M.** लिखकर 09821137418 (मोना भारिल्ल) अथवा 09322286000 (स्वानुभूति जैन) नम्बर पर **S.M.S.** अथवा सम्पर्क करें। इस योजना के अन्तर्गत हम आपको हमारे यहाँ होनेवाली धार्मिक गतिविधियों से अवगत करायेंगे और यदि आपको किसी भी धार्मिक गतिविधी में सहयोग चाहिये तो वह भी प्रदान करेंगे।

ह्न मोना भारिल्ल, प्रचार मंत्री, दिव्यध्वनि प्रचार-प्रसार ट्रस्ट, 162-2 ए, कल्पतरु स्ट्रीट, जे.वी.एल. रोड, अन्धेरी (ई.), मुम्बई-83

डॉ. शुद्धात्मप्रकाश जैन प्राचार्य पद पर ...

श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक विद्वान डॉ. शुद्धात्मप्रकाशजी शास्त्री अब वसुन्धरा शिक्षा स्नातकोत्तर महाविद्यालय के प्राचार्य पद पर नियुक्त हो गये हैं। यह महाविद्यालय राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर से संबद्ध है।

आपकी इस उपलब्धि के लिये महाविद्यालय परिवार आपको हार्दिक शुभकामनायें प्रेषित करता है। **ह्न प्रबन्ध सम्पादक**

स्लिपडिस्क रोगी ध्यान दें !

सम्पूर्ण उपचार बिना दवा, बिना कसरत, बिना चीरफाड, बिना आराम किए विश्व की नवीनतम तकनीक माइक्रो एक्यूप्रेशर द्वारा शीघ्र उपचार।

डॉ. पीयूष त्रिवेदी (मो.) 09828011871

गोल्ड मेडलिस्ट, बी.ए. एम.एस., एम.डी. (एक्यू.)

डिप्लोमा इन योगा, सुजोक (मास्को) एफ.ए.आर.सी. एस. (लंदन)

मेडिनोवा पोली क्लीनिक, केसरगढ, जे.एल.एन. मार्ग, जयपुर

समय : सायं 6 बजे से 9 बजे तक, रविवार को प्रात: 8 से 12 बजे तक

नोट-एक्यूप्रेशर सेवा समिति द्वारा 300 से अधिक नि:शुल्क शिविर आयोजित।

अन्य रोग : जोडों का दर्द, गर्दन का दर्द, मोटापा, मायोपैथी, मानस विकृतियां, मधुमेह तथा उच्च रक्तचाप आदि की सफल चिकित्सा।

श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट सलाहकार समिति का अधिवेशन सम्पन्न

जयपुर : दिनांक 12 अगस्त, 07 को श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट की सलाहकार समिति का अधिवेशन ब्र. धन्यकुमारजी बेलोकर, गजपंथा की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। अधिवेशन का उद्घाटन श्री शिखरचन्दजी जैन विदिशा ने किया।

इस अवसर पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनी, डॉ. श्रेयांसजी जैन जयपुर, श्री ज्ञानचन्दजी जैन कोटा, श्री पुखराजजी पहाडिया पीसांगन, श्री शिखरचन्दजी जैन विदिशा, श्री प्रमोदजी जैन सागर, श्री मलूकचन्दजी जैन सागर, श्री अभयकुमारजी टडैया ललितपुर, श्री अनूपजी नजा ललितपुर आदि का मार्मिक उद्बोधन प्राप्त हुआ। श्री बसन्तभाई दोशी ने ट्रस्ट की गतिविधियों का परिचय दिया।

कार्यक्रम का मंगलाचरण ब्र. अभिनन्दनजी शास्त्री खनियांधाना एवं पण्डित सुनीलजी धवल भोपाल ने किया। संचालन श्री महीपालजी ज्ञायक एवं आभार प्रदर्शन पण्डित शांतिकुमारजी पाटील ने किया।

साधना चैनल पर
डॉ. भारिल्ल के प्रवचन

अब प्रात: 6.20 से 6.40 बजे तक

देखना एवं सुनना न भूलें। इसकी सूचना मन्दिरजी में देवें और मित्रों को भी बता दें।

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.

प्रबन्ध सम्पादक : **पं.संजीवकुमार गोधा**,डबल एम.ए.जैनविद्या व धर्मदर्शन; इतिहास, नेट, एम.फिल एवं **पं. जितेन्द्र वि.राठी**, साहित्याचार्य

प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें -

ए- ४ बापूनगर, जयपुर - ३०२०१५ (राज.)

फोन : (०१४१) २७०५५८१, २७०७४५८

फैक्स : (०१४१) २७०४१२७